वर्णव्यवस्था

जिस को

श्रोत्रिय शङ्करलाल ने श्रुति स्मृति इतिहास
पुराण से संग्रह कर के

सामवेदभाष्यकार तथा संपादक वेदप्रकाश पण्डित
तुलसीराम स्वामी के प्रबन्ध से

स्वामियन्त्रालय
मेरठ
में
छपाकर प्रकाशित किया

फ़र्वरी सन् ९९ ई०

THE SWAMI PRESS,—MEERUT.

पहिलीबार १०००]   [मूल्य =)

गङ्गामाहात्म्यप्रमाण =)

दोनों पुस्तक मिलने का पता—

मास्टर भगवान्दास बुकसेलर

बिजनौर

ओ३म्

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याᳬ शूद्रो अजायत ॥

यह यजुर्वेद के ३१ अध्याय का ११ वां मन्त्र है, इस का यह अर्थ है कि ब्राह्मण ईश्वर के मुख, क्षत्रिय बाहू, वैश्य ऊरू, और शूद्र पगों से उत्पन्न हुवा है। इस लिये जैसे अनेक उपाय करने पर भी मुख न बाहू आदि और बाहू आदि न मुख हो सकता है इसी प्रकार ब्राह्मण न क्षत्रियादि और क्षत्रियादि ब्राह्मण नहीं हो सकते हैं ॥

शास्त्रों में तो मुख हाथ पैर वाला ईश्वर वर्णन नहीं करा है और जो तुम रामचन्द्र कृष्णादि अवतारों को कहो कि इन के तो हाथ पैर थे, यह ठीक है परन्तु यह सृष्टि के कर्ता ईश्वर नहीं हैं, और यहां सृष्टिकर्ता उस ईश्वर से अभिप्राय है जिस का पुरुष सूक्त में वर्णन करा है ॥

और दूसरे किसी पुराण, इतिहास या स्मृति में यह कहीं नहीं लिखा कि ईश्वर के मुख या बाहु से अमुक नाम का ब्राह्मण या क्षत्री पैदा हुवा ॥

इतिहास पुराणों में भी ब्राह्मण और क्षत्रिय की वंशावली पाई जाती हैं वैश्य और शूद्र की नहीं और जो योनि से ही होती तब तो इन की भी अवश्य होनी चाहिये थी ॥

और कश्यप की एक ही स्त्री अदिति से चारों वर्ण के देवता पैदा हुवे यदि योनि प्रधान होती तो एक ही वर्ण के सब पैदा होते ॥

"ब्राह्मणोस्य मुखमासीत्" वाले मन्त्र का यह आशय है, यहां मुखादि शब्द मुखादि अवयववाचक नहीं हैं किन्तु गौण वाचक हैं। जैसे ज्ञान, पालन, व्यवहार, सेवा, इस में ज्ञान को मुखस्थानी, पालन को क्षत्रिय, व्यवहार को वैश्य, और सेवा को शूद्रस्थानी माना है इसी कारण जो जिस वृत्ति को ग्रहण करे वही उस वर्ण का मानना चाहिये इस का यह अभिप्राय है ॥

और इस में जो न्यून अधिकता का विचार है वह गुणों कर के है यानी जिस में केवल सत्व गुण है वह ब्राह्मण ज्ञान (उपदेश) उस की वृत्ति है, रजोगुण का धर्म पालन है इस लिये जिस में केवल रजोगुण है वही क्षत्रिय

है। रजस् और तमस् का धर्म व्यवहार है इस लिये जिस पुरुष में यह दोनों हों वह वैश्य है। और केवल तमोगुण का धर्म सेवा है इस लिये जो सेवादि कर्म करता है वह शूद्र है परन्तु वर्णभेद वा जातिभेद सृष्टि के आरम्भ से ही है। अब आप को यह प्रश्न हो सकता है कि सृष्टि के आरम्भ में वर्ण पृथक् २ किस प्रकार ज्ञात हुए, अर्थात् हम ब्राह्मण से तुम क्षत्रिय से वे वैश्य से और अमुक शूद्र के वीर्य से उत्पन्न हुए ॥

महाभारत शान्तिपर्व मोक्षधर्म अ० १८८ भृगु भरद्वाज संवाद में लिखा है कि। भरद्वाज उवाच—

कामः क्रोधो भयं लोभः शोकश्चिन्ता क्षुधा श्रमः।
सर्वेषां न प्रभवति कस्माद्वर्णो विभज्यते ॥
स्वेदमूत्रपुरीषाणि श्लेष्मा पित्तं सशोणितम्।
तनुः क्षरति सर्वेषां कस्माद्वर्णो विभज्यते ॥

अर्थ—काम, क्रोध, भय, लोभ, शोक, चिन्ता, क्षुधा और थकना आदि सब मनुष्यमात्र को बराबर ही सताते हैं फिर (ब्राह्मणादि) वर्णभेद का कारण क्या है? पसीना, मूत्र, विष्ठा, कफ, पित्त, लोहू आदि सब के शरीर से एक सा ही निकलता है। ब्राह्मणादि वर्णों के मूत्रादि में कुछ भेद नहीं दीखता फिर वर्णभेद का कारण क्या है? यह भरद्वाज जी ने भृगु जी से पूछा है जो अब भृगु जी ने उत्तर दिया है वह लिखा जाता है:—

न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राह्ममिदं जगत्।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम् ॥१०॥
कामभोगप्रियास्तीक्ष्णाः क्रोधनाः प्रियसाहसाः।
त्यक्तस्वधर्मारक्ताङ्गास्ते द्विजाः क्षत्रतां गताः ॥ ११ ॥
गोभ्यो वृत्तिं समास्थाय पीताः कृष्युपजीविनः।
स्वधर्मान्नानुतिष्ठन्ति ते द्विजा वैश्यतां गताः ॥१२॥
हिंसानृतप्रिया लुब्धाः सर्वकर्मोपजीविनः।
कृष्णाः शौचपरिभ्रष्टास्ते द्विजाः शूद्रतां गताः ॥१३॥

इत्येतैः कर्मभिर्व्यस्ता द्विजा वर्णान्तरं गताः ।
धर्मो यज्ञः क्रिया तेषां नित्यं न प्रतिषिध्यते ॥१४॥
इत्येते चतुरोवर्णा येषां ब्राह्मी सरस्वती ।
विहिता ब्रह्मणा पूर्वं लोभात्त्वज्ञानतां गताः ॥१५॥

अर्थ—सृष्टि के आरम्भ में वर्ण भिन्न २ नहीं थे । ब्रह्म वा ब्रह्मा से उत्पन्न होने के कारण सभी का नाम ब्राह्म वा ब्राह्मण था । काम भोग जिन को प्रिय, क्रोधी, तीक्ष्ण स्वभाव वाले, शीघ्रता करने वाले, जिन्हों ने अपना धर्म जितेन्द्रियता अक्रोध शान्तिशीलता विचार पूर्वक काम करना आदि छोड़ दिया ऐसे लाल रंगधारी ब्राह्मण क्षत्रियपन को प्राप्त वा क्षत्रिय माने गये । गोरक्षा से अपनी जीविका मानकर पीला वर्ण धारण करने वाले खेती से निर्वाह करते हुवे जिन्होंने अपना धर्म शिलोञ्छवृत्ति वा जप तप आदि छोड़ दिया ऐसे ब्राह्मण सृष्टि के आरम्भ में वैश्य भाव को प्राप्त हुवे या वैश्य माने गये । हिंसा करना तथा मिथ्या बोलना जिन को प्रिय हुआ ऐसे लोभी सब काम कर के जीविका करने वाले, कृष्ण वर्ण युक्त तथा शुद्धि पवित्रता से रहित, भ्रष्टा चार ऐसे ब्राह्मण शूद्र माने गये वा कर्मानुसार शूद्र होगये ॥

इन पूर्वोक्त कर्मों से भिन्न हुवे ब्राह्मणों के चार वर्ण बन गये । पूर्वोक्त ब्राह्मणादि चारों वर्ण के लिये धर्म और यज्ञ करना कभी निषिद्ध नहीं है ॥

इन पूर्वोक्त ब्राह्मणादि चारों वर्ण के लिये सृष्टि के आरम्भ में परमेश्वर ने सब के हितार्थ वेदविद्या प्रचरित की जिस के अनुसार चलने से सब का कल्याण होता परन्तु लोभ वश होकर वेदविद्या को त्याग देने से अज्ञानता को प्राप्त होगये ॥

इस विषय में विशेष वक्तव्य यह है कि यद्यपि सृष्टि के समय मनुष्यमात्र उत्पन्न हुए तब वर्ण भिन्न २ नहीं थे तथापि उन २ में पूर्व कल्प के शेष सञ्चित संस्कार रूप कर्मों के अनुसार वैसी २ योग्यता पहिले से ही विद्यमान थी । जिस के अनुसार वे ब्राह्मणत्वादि के अधिकार को प्राप्त हुए क्योंकि विना बीज वा मूल के वृक्ष होना जैसे असम्भव है वैसे निर्मूल कुछ नहीं हो सकता । इसीलिये यह शङ्का भी निवृत्त हो जाती है कि जिन को शूद्र बनाया वा नियत किया उन्हीं को ब्राह्मण का अधिकार क्यों नहीं मिला ?

तथा जिन को ब्राह्मण बनाया वे शूद्र क्यों नहीं बना दिये गये ? ॥ अर्थात् पूर्व संस्कारों के अनुसार जिन में जैसी योग्यता देखी गयी उन २ को वैसा २ ब्राह्मणादि का अधिकार दिया गया। और ब्राह्मणादि की क्या २ योग्यता होनी उचित है यह पहिले २ वेद से ज्ञात हुई कि अमुक २ गुण कर्म जिस २ में हों वह २ ब्राह्मण वा क्षत्रिय होना चाहिये। इस से यह सिद्ध होगया कि यद्यपि सृष्टि के आरम्भ में ब्राह्मणादि का कोई प्रत्यक्ष चिह्न नहीं था इसी से यह व्यवहार बन गया कि वर्णों में पहिले भेद नहीं था। तथापि ब्राह्मणपन आदि पहिले से ही उन २ में था इसीलिये ईश्वरीय सृष्टि के साथ वर्णव्यवस्था माननी चाहिये क्योंकि मनुष्यों की रचना से पहिले वेद में वर्ण विभाग विद्यमान था। अब रहा यह कि ब्राह्मणादि के ऊपरी प्रत्यक्ष चिह्न क्या होने चाहियें ? इस का उत्तर यह है कि एक तो चिह्न शरीर के साथ होने चाहियें। और द्वितीय कृत्रिम चिह्न भी भिन्न २ पहिले नियत किये रहें। ब्राह्मण गौर वर्ण, क्षत्रिय रक्त वर्ण, वैश्य पीत वर्ण और शूद्र कृष्णवर्ण माने गये। क्या ऐसा २ स्वाभाविक शरीर का रंग हो तो ब्राह्मणादि का विभाग माना जायगा ? और जो ऐसा मानोगे तो बड़ा दोष आवेगा क्योंकि यह प्रत्यक्ष से विरुद्ध है। प्रत्यक्ष देखलो जो ब्राह्मणकुलों में माने जाते हैं उन में हज़ारों काले रंग के विद्यमान हैं फिर यह नियम कैसे बनेगा ? । इस का उत्तर यह है कि प्रत्यक्ष में भी कुछ विरोध नहीं केवल समझ का दोष है ॥

प्रथम तो शोचना यह है कि शास्त्रीय व्यवस्था और लोकव्यवहार में बड़ा अन्तर है उस को विना शोचे यह शङ्का हुई कि सब में सब रङ्ग विद्यमान हैं। हम कह सकते हैं कि सब प्रकार के कर्म भी सभी में विद्यमान हैं। अर्थात् ब्राह्मण जाति में पढ़ना पढ़ाना वा सन्ध्यादि करना ब्राह्मण के, ज़मीदारी आदि में बलात्कार कार्य सिद्ध करना आदि क्षत्रिय के, खेती पशु रक्षा वा गोरक्षा तथा व्यापारादि वैश्य के, और सब प्रकार की नौकरी करना आदि शूद्र के काम प्रत्यक्ष विद्यमान हैं तब उस समुदाय का नाम ब्राह्मण क्यों रक्खा जाय किन्तु उन को चारों वर्ण कहना चाहिये। परन्तु इस का समाधान कठिन है। हमारा सिद्धान्त तो यह है कि वर्त्तमान समय में जो वर्णव्यवस्था बहुत ही बिगड़ गई है इसी से शास्त्र के सिद्धान्तानुसार जो लोग वैश्य, क्षत्रिय, वा शूद्र होने की ठीक २ योग्यता रखते हैं ऐसे बहुत वा अधिकांश ब्राह्मण कहाते हैं परन्तु जब कभी ठीक २ शास्त्र के सिद्धान्तानु-

कूल वर्णव्यवस्था मानी जाती थी, वा मानी जावे, तब भी सब प्रकार के गुण कर्मों वाले मनुष्य सब वर्णों में रहते थे वा रहेंगे ॥

अब रहा यह कि जब सब में सब गुण हैं तो ब्राह्मणादि चारों वर्ण भिन्न२ कैसे होंगे ? इस का दृष्टान्त यह है कि जैसे लोक में कहते हैं कि ब्राह्मणों का यह ग्राम है वा क्षत्रियों का ठाकुरों वा मुसलमानों का ग्राम है। यद्यपि उस में नाई, चमार, धोबी, आदि कमीन लोगों के भी दो चार घर बसते हों तथापि ब्राह्मणादि के नाम से ग्राम कहा वा माना जाता है। जैसे यहां लोक में अधिकांश वा प्रधान के नाम से व्यवहार होता और गौण का नाम छोड़ दिया जाता है, इसी प्रकार शास्त्र में भी मुख्य को प्रबल वा विशेष मान कर व्यवहार किया जाता है। ऐसे ही जिस शरीरधारी वा समुदाय को हम ब्राह्मण मानें उस में ब्राह्मण के गुण कर्म स्वभाव प्रबल वा मुख्य होने चाहियें और क्षत्रिय वैश्यादि के गुण कर्म स्वभाव कुछ २ उस में अवश्य रहेंगे जैसे जब गुरु शिष्य पर क्रोध करता है तब उस में रजोगुण अवश्य माना जाय और जब सोता है उस समय तमोगुण, और जब जप तप आदि करता है तब सत्त्वगुण। ऐसे ही सब गुणों को सब में उदाहरण जानना, उन से ब्राह्मणपन का व्यवहार रुक नहीं सक्ता है। इसी तरह गौर वर्ण आदि सर्वत्र रहेंगे परन्तु ब्राह्मण वर्ण में विशेष होना चाहिये ॥

द्वितीय वार्त्ता यह है कि जिस की सिद्धि में बहुत से हेतु वा लक्षण होते हैं वह एक लक्षण से सिद्ध नहीं हो सकता। जैसे भोजन बनाने में अनेक वस्तुओं की आवश्यकता है तो अग्नि, जल, आटा, लकड़ी, दाल, मसाला, वर्तन, चूल्हा, और बनाने वाला आदि एक एक वस्तु से भोजन कदापि नहीं बन सकता ॥

अनेक वा प्रधान २ वस्तुओं के होने से बन सकता है और यदि सब सामान ठीक २ हो तो बहुत अच्छा भोजन बनना सम्भव है। इसी प्रकार ब्राह्मणपन के सामान में एक गौर वर्ण के होने से भी ब्राह्मण नहीं कहा वा माना जा सकता है और अन्य गुण कर्म ब्राह्मणपन के हों केवल गौर वर्ण न हो काला वा अन्य वर्ण हो तो भी ब्राह्मण माना जायगा और यदि अन्य गुण कर्मों के साथ गौर वर्ण भी हो तो पूरा वा पक्का ब्राह्मण कहलावेगा ऐसे ही सब वर्णों की व्यवस्था जानना, मनुस्मृति अध्याय २

वित्तं बन्धुर्वयः कर्म विद्या भवति पञ्चमी।
एतानि मान्यस्थानानि गरीयो यद्यदुत्तरम् ॥१३६॥
पञ्चानां त्रिषु वर्णेषु भूयांसि गुणवन्ति च।
यत्र स्युः सोत्र मानार्हः शूद्रोपि दशमीं गतः ॥१३७॥

अर्थ—वित्त न्यायोपार्जित धन, और पितृव्यादि श्रौत स्मार्तादिक कर्म, अवस्था, विद्या; ये पांच बड़ाई के देने वाले हैं। उत्तरोत्तर एक से एक अधिक है। ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों में पूर्वोक्त पांच गुण जिस में जितने अधिक हों वह उतना माननीय अधिक है और शूद्र भी माननीय हैं॥

विचारो कि मनु जी भी गुण से ही माननीय होना मानते हैं योनि से नहीं। सदैव हर चीज़ अपने गुण ही से मालूम होती है उदाहरण जैसे दो अम्बा हैं देखने में एक से हैं परन्तु एक उन में मीठा है और एक खट्टा अब यह बात कि कौनसा कैसा है उन के गुणों ही से विदित होगी। ऐसे ही जब दो पुरुष एक ब्राह्मण और दूसरा शूद्र है उन में किस को ब्राह्मण जाने और किस को शूद्र, जब कि उन के माता पिता को नहीं जानते और वह स्वयं भी कुछ नहीं बताते तब उन के स्वाभाविक गुण से ही उन की परीक्षा करने पड़ेगी इसलिये मुख्य कारण वर्णव्यवस्था में गुण ही हैं। बहुत से आज कल के पण्डित केवल योनि ही से उत्पन्न होने से ब्राह्मणादि वर्ण मानते हैं यह ठीक नहीं। व्यास जी क्षत्री की लड़की से उत्पन्न हुवे और ब्राह्मण कहलाये और शुक्राचार्य्य की कन्या क्षत्रिय राजा ययाति से विवाही गई और उस की सन्तान क्षत्रिय कहलाई। इसी तरह महाभारत में बहुत से दृष्टान्त हैं यहां थोड़े से प्रमाण जो भारत, भगवतद्गीता, मनुस्मृति, अत्रिस्मृति, दक्षस्मृति, हारीतस्मृति, व्यासस्मृति, पराशरस्मृति, वसिष्ठादिस्मृति से सङ्ग्रह किये हैं लिखे जाते हैं जिस से सब जान लेवें कि गुण कर्म से वर्णव्यवस्था हुई है या योनि ही से पैदा होने से जातिभेद होगया। जैसा कि आज कल मान रहे हैं॥

युधिष्ठिरं प्रति वैशम्पायनवचनम्

१ क्षान्त्यादिभिर्गुणैर्युक्तस्त्यक्तदण्डो निरामिषः।
न हन्ति सर्व्वभूतानि प्रथमं ब्रह्मलक्षणम् ॥

२ यदा सर्वं परद्रव्यं पथि वा यदि वा गृहे ।
अदत्तं नैव गृह्णाति द्वितीयं ब्रह्मलक्षणम् ॥

३ त्यक्त्वा क्रूरस्वभावन्तु निर्म्ममो निःपरिग्रहः ।
मुक्तश्चरति यो नित्यं तृतीयं ब्रह्मलक्षणम् ॥

४ देवमानुषनारीणां तिर्य्यग्योनिगतेष्वपि ।
मैथुनं हि सदा त्यक्तं चतुर्थं ब्रह्मलक्षणम्॥

५ सर्व्वे वै योनिजा मर्त्याः सर्व्वेमूत्रपुरीषिणः ।
एकेन्द्रियेन्द्रियार्थाश्च तस्माच्छीलगुणैर्द्विजः ॥

६ सत्यं शौचं दया शौचं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
सर्व्वभूते दया शौचं तपः शौचं च पञ्चमम् ॥

७ पञ्चलक्षणसम्पन्न ईदृशो यो भवेत्द्विजः ।
तमहं ब्राह्मणं ब्रूयां शेषाः शूद्रा युधिष्ठिर ॥

८ न कुलेन न जात्या वा क्रियाभिर्ब्राह्मणो भवेत् ।
चण्डालोऽपि हि वृत्तस्थो ब्राह्मणःस युधिष्ठिर ॥

९ एकवर्णमिदम् पूर्वं विश्वमासीत् युधिष्ठिर ।
कर्म्मक्रियाविशेषेण चातुर्वर्ण्यं प्रतिष्ठितम् ॥

१० शूद्रोऽपि शीलसम्पन्नो गुणवान् ब्राह्मणो भवेत् ।
ब्राह्मणोऽपि क्रियाहीनः शूद्रात्प्रत्यवरो भवेत् ॥

११ पञ्चेन्द्रियार्णवं घोरं यदि शूद्रोऽपि तीर्णवान् ।
तस्मै दानं प्रदातव्यमप्रमेयं युधिष्ठिर ॥

१२ नजातिर्दृश्यते राजन् गुणाः कल्याणकारकाः ।
जीवितं यस्य धर्मार्थं परार्थे यस्य जीवितम् ॥

१३ अहोरात्रं चरेत्कान्तिं तं देवा ब्राह्मणं विदुः ।

परित्यज्य गृहावासं ये स्थिता मोक्षकाङ्क्षिणः ॥

१४ कामेष्वसक्ताः कौन्तेय ब्राह्मणास्ते युधिष्ठिर ।

अहिंसा निर्म्ममत्वं वासतः कृत्यस्य वर्ज्जनम् ॥

१५ रागद्वेषनिवृत्तिश्च एतत् ब्राह्मणलक्षणम् ॥

क्षमा दया दमोदानं सत्यं शौचःस्मृतिर्घृणा ।

विद्या विज्ञानमास्तिक्यमेतत् ब्राह्मणलक्षणम् ॥

१६ यदा न कुरुते पापं सर्व्वभूतेषु दारुणम् ।

कायेन मनसा वाचा ब्रह्म सम्पद्यते तदा ॥

अर्थ—युधिष्ठिर के प्रति वैशम्पायन का वाक्यः—

क्षांतिप्रभृति गुणों से युक्त दण्ड और आमिष भोजन जिस ने त्याग किया है, किसी जीव की हिंसा नहीं करता है, यह ब्राह्मण का प्रथम लक्षण है॥

जब पराये द्रव्य को, पथ में हो वा घर में, विना दिये नहीं लेता, यह ब्राह्मण का दूसरा लक्षण है ॥

क्रूर स्वभाव को त्याग कर के, ममता और परिग्रह रहित होकर जो त्यक्त बन्धन होकर सदा चलता है, यह ब्राह्मण का तीसरा लक्षण है ॥

जिस ने सदा मैथुन त्याग किया है, यह ब्राह्मण का चौथा लक्षण है ॥

सत्य शौच है, दया शौच है, इन्द्रियनिग्रह शौच है, सब जीवों में दया शौच है और तप ५ वां शौच है, इस प्रकार पञ्चलक्षणसम्पन्न जो द्विज होता है उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं, इन के सिवाय जो हैं हे युधिष्टिर ! वे शूद्र हैं ॥

कुल वा जाति वा क्रियाओं से ब्राह्मण नहीं होता चण्डाल भी यदि उत्कृष्ट गुण वाला हो तो हे युधिष्ठिर ! वह ब्राह्मण है । ८, ९, १०, हे युधिष्ठिर ! एक वर्ण से ही (यह) विश्व (पहिले) भरा हुवा था, कर्म्म क्रिया के विशेष से चातुर्वर्ण्य स्थापित हुवा सारे मनुष्य योनि से उत्पन्न हुए हैं, सब मूत्र पुरीष करने वाले हैं, एक सी ही सबों की इन्द्रिय हैं और एक से ही विषय हैं, इस लिये शील और गुण से द्विज होता है गुणवान् और शील सम्पन्न शूद्र भी ब्राह्मण होता है, क्रियाहीन ब्राह्मण शूद्र से भी छोटा होता है ॥ ११-१६। पञ्चेन्द्रिय रूप घोर समुद्र को यदि शूद्र भी तर जाय तिस को हे युधि-

ष्ठिर ! निःसन्देह दान दे दे ॥ १२ ॥ हे राजन् ! जाति नहीं देखी जाती है, गुण ही कल्याणकारी हैं। जिस का जीना केवल धर्म्म के निमित्त है, जिसका जीना परोपकार निमित्त है ॥ १३ ॥ दिन रात जो अच्छे काम करताहै उसे देवता लोग ब्राह्मण जानते हैं, गृहवास को छोड़ कर जो मुमुक्षु होकर स्थित है, काम में जो आसक्त नहीं हैं, हे कौन्तेय ! हे युधिष्ठिर ! वे भी ब्राह्मण हैं ॥ १४ ॥ हिंसा और ममता को त्याग और समान भाव से स्थिति, क्रियाओं का छोड़ना और राग द्वेष की निवृत्ति, यह भी ब्राह्मण के लक्षण हैं ॥ १५ ॥ क्षमा, दया, इन्द्रियदमन, दान, सत्य, शौच, स्मृति, घृणा (पाप से), विद्या, विज्ञान, आस्तिक्य, ये ब्राह्मण के लक्षण हैं ॥ १६ ॥ जब किसी जीव के प्रति शरीर, मन वा वाणी से दारुण पाप नहीं करता तब ब्रह्म को प्राप्त होता है (यानी ब्राह्मण होता है) ॥ १७ ॥

महाभारत वन पर्व्व आजगरपर्व्वाध्यायः—

सत्यं दानं क्षमा शीलमानृशंस्यं तपो घृणा ।
दृश्यते यत्र नागेन्द्र ! स ब्राह्मण इति स्मृतः ॥
शूद्रे तु यद्भवेल्लक्ष्म, द्विजे तच्च न विद्यते ।
नवै शूद्रो भवेच्छूद्रो ब्राह्मणो न च ब्राह्मणः ॥
यत्रैतल्लक्ष्यते सर्प वृत्तं स ब्राह्मणः स्मृतः ।
यत्रैतन्न भवेत्सर्प ! तं शूद्रमिति निर्दिशेत् ॥

सत्य, दान, क्षमा, शील, आनृशंस्य, तप, और घृणा ये सब (गुण) हे नागेन्द्र ! जिस में दिखलाई देवें वह ब्राह्मण कहलाता है। शूद्र में जो (गुण) दिखलाई देते हैं, द्विज में वे नहीं होते। (जातिका) शूद्र होने से ही शूद्र नहीं होता और न ब्राह्मण होने से ब्राह्मण होता है। जिस में हे सर्प ! यह (पूर्वोक्त) गुण दिखलाई दें वह ब्राह्मण कहलाता है। जिस में ये (गुण) न होवें, हे सर्प ! उसे शूद्र जाने ॥

अन्यच्च महाभारते शान्तिपर्वणि १८९ अध्यायः—

सत्यं दानमथाद्रोह आनृशंस्यं त्रपा घृणा ।

तपश्च दृश्यते यत्र स ब्राह्मण इति स्मृतः ॥
क्षत्रजं सेवते कर्म वेदाध्ययनसंगतः ।
दानादानरतिर्यस्तु स वै क्षत्रिय उच्यते ॥
विशत्याशु पशुभ्यश्च कृष्यादानरतिः शुचिः ।
वेदाध्ययनसम्पन्नः स वैश्य इति संज्ञितः ॥
सर्वभक्षरतिर्नित्यं सर्वकर्मकरोऽशुचिः ।
त्यक्तवेदस्त्वनाचारः स वै शूद्र इति स्मृतः ॥
शूद्रे चैतद्भवेल्लक्ष्म द्विजे तच्च न विद्यते ।
सवै शूद्रो भवेच्छूद्रो ब्राह्मणो ब्राह्मणो न च ॥

अर्थ—सत्य, दान, अद्रोह, आनृशंस्य, लज्जा, घृणा, और तप, यह सब जिस में दिखलाई देते हैं वह ब्राह्मण समझा गया है। क्षात्र धर्म (रक्षाप्रभृति) कर्म जो करता है, वेदाध्ययनयुक्त है, देने और लेने में जिस की रति है वह क्षत्रिय कहलाता है ॥

(जिस की बुद्धि व्यवहारमें) शीघ्र प्रविष्ट हो और पशुओं से जो कृषि कर्म लेवे, शुद्ध रहे और वेद पढ़ा हुआ हो, उसे वैश्य कहते हैं। सब वस्तुओं के खाने में जिस की नित्य रति है, सब कामना करने वाला और अशुद्ध है, वेद जिस से छूटा हुआ है और जो सदाचाररहित है, वही शूद्र कहलाता है। जिस शूद्र में यह लक्षण नहीं वही शूद्र शूद्र है (अन्य नहीं) और जिस ब्राह्मण में (ब्राह्मण के पूर्वोक्त) लक्षण न हों वह ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं ॥

श्रीमद्भागवते ७ स्कन्धे युधिष्ठिरं प्रति नारदवचनम्—

शमो दमस्तपः शौचं सन्तोषः क्षान्तिरार्जवम् ।
ज्ञानं दयाऽच्युतात्मत्वं सत्यं च ब्रह्मलक्षणम् ॥२१॥
शौर्यं वीर्यं धृतिस्तेजस्त्याग आत्मजयः क्षमा ।
ब्रह्मण्यता प्रसादश्च रक्षा च क्षत्रलक्षणम् ॥२२॥
देवगुर्वच्युते भक्तिः स्त्रीवर्गपरिपोषणम् ।

आस्तिक्यमुद्यमोनित्यं नैपूंण्य वैश्यलक्षणम् ॥२३॥

शूद्रस्य संनतिः शौचं सेवा स्वामिन्यमायया ।

अमन्त्रयज्ञोह्यस्तेयंसत्यंगोविप्ररक्षणम् ॥ २४ ॥

यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यञ्जकम् ।

यदन्यत्रापिदृश्येत तत्तेनैव विनिर्दिशेत् ॥२५॥

अर्थ—मन को और इन्द्रियों को रोकना, तप, शौच, सन्तोष, क्षमा, सीधापन, ज्ञान, दया, ईश्वर में परमभक्ति, और सत्य, ये सब ब्राह्मण के लक्षण हैं ।।२१।।

शौर्य्य, वीर्य्य, धैर्य्य, तेज, त्याग, अपने को जीतना, क्षमा, ब्राह्मण का सम्मान, अनुग्रह, और रक्षा, (ये सब) क्षत्रिय के लक्षण हैं ।।२२।।

देवता, गुरु, ईश्वर में भक्ति, धर्मार्थकाम की रक्षा, आस्तिक्य, नित्य उद्यम, नैपुण्य, ये वैश्य के लक्षण हैं ॥२३।। शूद्र का (लक्षण) नत होना, शौच, प्रभु की निष्कपट सेवा, विना मन्त्रों के यज्ञ, अचौर्य्य, सत्य, गौ और ब्राह्मण की रक्षा है ।।२४।। जिस जिस पुरुष का जो वर्ण द्योतक लक्षण कहा गया यदि अन्य में भी (वे लक्षण) दिखलाई दें तो उसे उन लक्षणों के अनुसार ही निर्देश करे ।।२५।।

श्रीमद्भागवते द्वितीयस्कन्धे ४ अ० शुकस्तुतिः ।

किरातहूणान्ध्रपुलिन्दपुष्कसाः, आभीरकङ्का यवनाः खशादयः ।

येऽन्ये च पापायदुपाश्रयाश्रयाः, शुद्ध्यन्तितस्मैप्रभविष्णवेनमः १८

अर्थ—श्रीभागवत में शुकदेव जीने कहा है २ स्कन्द—किरात, हूण, अन्ध्र, पुलिन्द, पुष्कस, आभीर, कङ्क, यवन, खश प्रभृति (म्लेच्छ जाति) और जो पापी जाति हैं, जिस परमेश्वर के आश्रित होने से शुद्ध होजाती है उस प्रभाव वाले परमेश्वर को नमस्कार हो ।। १८।।

महाभारतीयाऽनुशासनपर्वान्तर्गत उमामहेश्वर संवाद अ० १४३

१ एभिस्तुकर्म्मभिर्देवि शुभैराचरितैस्तथा ।

शूद्रो ब्राह्मणतां याति वैश्यः क्षत्रियतां व्रजेत् ॥२६॥

२ एतैः कर्मफलैर्देवि न्यूनजातिकुलोद्भवः ।
शूद्रोऽप्यागमसम्पन्नो द्विजो भवति संस्कृतः ॥४६॥
३ ब्राह्मणो वाप्यसद्वृत्तः सर्वसंकरभोजनः ।
ब्राह्मण्यं समनुत्सृज्य शूद्रोभवति तादृशः ॥४७॥
४ कर्मभिः शुचिभिर्देवि शुद्धात्माविजितेन्द्रियः ।
शूद्रोपिद्विजवत्सेव्य इति ब्रह्मानुशासनम् ॥४८॥
५ स्वभावः कर्म च शुभं यत्र शूद्रेपि तिष्ठति ।
विशिष्टः सद्विजातेर्वै विज्ञेय इति मे मतिः ॥४९॥
६ न योनिर्नापिसंस्कारो न श्रुतं न च सन्ततिः ।
कारणानिद्विजत्वस्य वृत्तमेव तु कारणम् ॥५०॥
७ सर्वोऽयं ब्राह्मणोलोके वृतेन च विधीयते ।
वृत्ते स्थितस्तु शूद्रोऽपि ब्राह्मणत्वं नियच्छति ॥५१॥
८ ब्रह्मस्वभावः कल्याणि समः सर्वत्र मेमतिः ।
निर्गुणं निर्मलं ब्रह्म यत्र तिष्ठति स द्विजः ॥५२॥
९ एतत्ते गुह्ममाख्यातं यथा शूद्रोभवेत् द्विजः ।
ब्राह्मणो वा च्युतो धर्मात् यथा शूद्रत्वमाप्नुत ॥५९॥

अर्थ—शिवजी का पार्वती के प्रति वाक्य—

१ इन कर्मों से हे देवी, और अच्छे आचरणों से, शूद्र ब्राह्मण हो जाता है, वैश्य क्षत्रिय हो जाता है ॥

२ इन कर्मों के फल से, हे देवी, नीच जाति और नीचकुलोत्पन्न शूद्र भी आगमसम्पन्न और संस्कारविशिष्ट ब्राह्मण हो जाता है ॥

३ सर्व्व सङ्कर भोजन असच्चरित्र ब्राह्मण भी ब्राह्मणत्व को त्याग करके वैसा ही शूद्र हो जाता है ॥

४ पवित्र कर्मों के द्वारा, हे देवि ! शुद्धात्मा और जितेन्द्रिय शूद्र भी ब्राह्मण की नाईं सेवा करने योग्य है यह ब्रह्मा की आज्ञा है ॥

५ जिस शूद्र में अच्छे स्वभाव और कर्म्म हों उसे ब्राह्मणों में श्रेष्ठ जानना चाहिये, यह मेरी समझ है ।।

६ (ब्राह्मण) योनि से उत्पत्ति (यज्ञोपवीतादि) संस्कार वेदपाठ, (ब्राह्मण वंशीय) सन्तान होना, ये सब ब्राह्मणत्व के कारण नहीं हैं, सच्चरित्र होना ही कारण है ।।

७ इस लोक में जो ब्राह्मण का विधान है वह सब चरित्र से है शूद्र भी सद्वृत्त में स्थित हो तो ब्राह्मणत्व को प्राप्त होता है ।।

८ ब्रह्मस्वभाव हे कल्याणि ! मैं सर्व्वत्र समान समझता हूं निर्गुण निर्म्मल ब्रह्म जिस के हृदय में स्थित है वह ब्राह्मण है ।।

९ शूद्र जिस प्रकार से ब्राह्मण होजाता है और ब्राह्मण धर्म्मभ्रष्ट होने से जिस प्रकार से शूद्र हो जाता है यह गुप्त बात मैंने तुम से कही ।।

श्री भगवद्गीता १८ अध्याय

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप ।
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः ॥ ४१ ॥
शमो दमस्तपः शौचं शान्तिरार्जवमेव च ।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ॥ ४२ ॥
शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्मस्वभावजम् ॥ ४३ ॥
कृषिगोरक्षवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् ।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ॥ ४४ ॥

अर्थ–हे परंतप ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, इन वर्णों के अपने प्राचीन कर्म से उत्पन्न, सत्व आदि गुणों कर के सहित, कर्म पृथक् २ किये गये हैं ।। ४१ ।। बाह्येन्द्रियों का रोकना, अन्तः करण का निरोध, शास्त्रीय काय क्लेश, कर्मानुष्ठान योग्यता, क्षमा, नम्रता, ज्ञान, विज्ञान, आस्तिकता; ये ब्राह्मण के स्वाभाविक कार्य हैं ।।४२।। शौर्य, तेज, धैर्य, उत्साह शीलता, युद्ध में स्थिर रहना, पात्र को देना, प्रजा का पालन, सामर्थ्य; ये क्षत्रिय के स्वाभाविक कर्म हैं ।। ४३ ।। खेती, गौओं की रक्षा, खरीदना, बेचना; यह

वैश्य का स्वाभाविक कर्म है, और सेवा करना यह शूद्र का स्वाभाविक कर्म है ।।४४।। १८ अध्याय ।।

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ॥ १३ ॥

ब्राह्मणादि चारों वर्ण मैंने गुण कर्म के विभाग से रचे हैं, (यह भगवद्गीता अध्याय ४ का वाक्य है)

मनुस्मृति के प्रमाण—

१ न तिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम् ।
स शूद्रवद्बहिष्कार्यः सर्वस्माद्द्विजकर्मणः ॥ १०३ ॥

२ यो नवेत्त्यभिवादस्य विप्रः प्रत्यभिवादनम् ।
नाभिवाद्यः स विदुषा यथा शूद्रस्तथैव सः ॥ १२६ ॥

३ योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम् ।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥१६८॥ अ० २

४ शूद्रोब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम् ।
क्षत्रियाज्जातमेवंतु विद्याद्वैश्यात्तथैवच ॥ ६५ ॥ अ० १०

५ जातो नार्यामनार्यायामार्यादार्योभवेद्गुणैः ।
जातोऽप्यनार्यादार्यायामनार्य इति निश्चयः ॥ ६७ ॥

६ यथा काष्ठमयोहस्तो यथा चर्ममयो मृगः ॥
यश्च विप्रोनधीयानस्त्रयस्ते नाम बिभ्रति ॥ १५७ अ० २

७ यथा षंढोऽफलः स्त्रीषु यथा गौर्गवि चाफला ।
यथा चाज्ञेऽफलं दानं तथा विप्रोनृचोफलः ॥ १५८ ॥

८ शूद्रेण हि समस्तावद्यावद्वेदे न जायते ॥ २ अध्याय १७२

९ सद्यः पतति मांसेन लाक्षया लवणेन च ।
त्र्यहेण शूद्रो भवति ब्राह्मणः क्षीरविक्रयात् ॥ अध्याय १०।९२

१० अनार्यमार्यकर्माणमार्यं चानार्यकर्मिणम् ।
सम्प्रधार्याब्रवीद्धाता न समो नासमाविति ॥ ७३॥ १० अ०

१ अर्थ—जो प्रातः सन्ध्या में (उपासना के निमित्त) नहीं बैठता जो सायं सन्ध्या की उपासना नहीं करता उसे द्विज के सारे कर्म्मों से शूद्र की न्याई निकाल देना चाहिये ।। १०३ ।। अब सोचो कि ऐसे ब्राह्मण कितने हैं जो ठीक सूर्य्य के उदय अस्त के समय उपासना करते हों ।।

२ जो ब्राह्मण नमस्कार करने पर क्या कहना चाहिये इस को नहीं जानता वह ब्राह्मण शूद्रवत् नमस्कार करने योग्य नहीं है। यानी जैसा शूद्र है वैसा ही वह है ।। १२६ ।।

३ जो द्विज वेद को न पढ़ के अन्य (विद्या) में श्रम करता है वह जीता हुआ ही अपने कुटुम्ब के साथ शूद्रत्व को प्राप्त होता है ।। १६८ ।।

(अब वेद के पढ़ने वाले ब्राह्मण तो सहस्त्र में एक भी नहीं)

४ ब्राह्मण शूद्रता को प्राप्त होता है और शूद्र ब्राह्मणता को प्राप्त होता है। क्षत्रिय से हुवा भी इसी प्रकार और वैसे ही वैश्य से भी हुवा जानो ।।६५।।

शूद्रा स्त्री में ब्राह्मण से उत्पन्न हुवा गुणों कर के ब्राह्मण होगा। और शूद्र से ब्राह्मणी में उत्पन्न हुवा गुणों करके शूद्र उत्पन्न होगा इस प्रकार शास्त्र में निश्चय है ।। ६७ ।। १० अध्याय, (जो महाशय योनि से ही जाति मानते हैं तो उन के मत में ब्राह्मणी की योनि से ब्राह्मण और शूद्रा की योनि से शूद्र होना चाहिये परन्तु मनु जी ऐसा नहीं मानते जो इस श्लोक से विदित है। किन्तु यह केवल योनि से मानना सर्वथा अयोग्य है और शास्त्र के विरुद्ध है। इसलिये वही नहीं प्रधान माना जायगा। जिस को आगे विस्तार से लिखेंगे) और गुण सदैव गुणी के आधीन रहते हैं और गुणी बीज है। जैसा काष्ठ का हाथी और चमड़े का मृग, विना पढ़ा ब्राह्मण यह तीनों नाम मात्र को धारण करते हैं ।। १५७ ।। अ० २

जैसा स्त्री को नपुंसक निष्फल और गौ गौ में तथा अज्ञ में दान अफल है वैसे ही वेदरहित ब्राह्मण निष्फल है ।।१५८।। अध्याय २ ।।

अब सज्जन पुरुषो ! ज़रा पक्षपातरहित होकर विचारो कि दान देने का मनुजी ने पात्र किस को कहा है और आज कल कैसे को दान दिया जाता है ।।

जब तक ब्राह्मण को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं होता तब तक शूद्र के तुल्य रहता है ।। १७२ ।। अध्याय २ ।। अर्थात् यज्ञोपवीत से पहिले ब्राह्मण की भी शूद्र संज्ञा होती है ।।

मांस, लाख, लवण, इन के बेंचने से ब्राह्मण उसी समय में पतित हो जाता है और दूध के बेचने से ब्राह्मण तीन दिन में शूद्रता को प्राप्त होता है ९२ अ० १०॥ यहां योनि से उत्पन्न हुवे ब्राह्मण को भी लवण, व दूध बेचने से शूद्रवत् होना माना है। आज कल कितने ऐसे ब्राह्मण हैं। स्वयं विचार लो और जो कोई यह कहे कि आपत्ति है तो यह आपत्तिधर्म्म में भी नहीं है॥ द्विज शूद्रों के कर्म करने वाले और शूद्र द्विजों के कर्म करने वाले इन को ब्राह्मण विचार कर के बोले कि न तो वह सम है न असम है ॥७३॥ अ०१०॥

ब्राह्मणी की योनि से उत्पन्न हुवा जो ब्राह्मण यदि वह शूद्र के कर्म करता हो, और शूद्रा की योनि से उत्पन्न हुवा जो शूद्र यदि ब्राह्मण के कर्म करता हो तो आज कल लोकाचार की मुवाफ़िक़ वह ब्राह्मणी योनि से उत्पन्न हुवा शूद्र के कर्म करता हुवा भी ब्राह्मण ही माना जाता है। और लौकिक व्यवहार में उसे ही ब्राह्मण मानना पड़ेगा। परन्तु जो परलोक के वास्ते ऐसे ब्राह्मण का पूजनादि करे तो ठीक नहीं। वहां तो गुणों और सदाचार कर्म्म करके ही ब्राह्मण मानना पड़ेगा और ऐसा मानना शास्त्र के अनुकूल भी है। इस के इतर मानना शास्त्र के विरुद्ध है और बिलकुल निष्फल है। हम आशा करते हैं कि जो महाशय इस को पक्षपातरहित होकर विचारेंगे तो अवश्य ठीक मान लेंगे ॥

देवोमुनिर्द्विजो राजा वैश्यः शूद्रो निषादकः ।
पशुर्म्लेच्छोऽपि चाण्डालो विप्रादशविधाःस्मृताः ॥३७०॥
संध्या स्नानं जपं होमं देवता नित्यपूजनम् ।
अतिथिं वैश्वदेवं च देवब्राह्मण उच्यते ॥३७१॥
शाके पत्रे फले मूले वनवासे सदा रतः ।
निरतोऽहरहः श्राद्धे स विप्रो मुनिरुच्यते ॥ ३७२ ॥
वेदान्तं पठते नित्यं सर्वसंगं परित्यजेत् ।
सांख्ययोगविचारस्थः स विप्रो द्विजउच्यते ॥३७३॥
अस्त्राहताश्च धन्वानः संग्रामे सर्वसंमुखे ।
आरम्भेनिर्जिता येन स विप्रः क्षत्रउच्यते ॥३७४॥

कृषिकर्मरतो यश्च गवां च प्रतिपालकः ।
वाणिज्यंव्यवसायश्च स विप्रो वैश्यउच्यते ॥३७५॥
लाक्षालवणसंमिश्रं कुसुम्भंक्षीरसर्पिषः ।
विक्रेता मधुमांसानां स विप्रः शूद्रउच्यते ॥३७६॥
चोरश्च तस्करश्चैव सूचको दंशकस्तथा ।
मत्स्यमांसे सदा लुब्धो विप्रो निषादउच्यते ॥ ३७७ ॥
ब्रह्मतत्वं न जानाति ब्रह्मसूत्रेण गर्वितः ।
तेनैव स च पापेन विप्रः पशुरुदाहृतः ॥३७८॥
वापीकूपतडागानामारामस्य सरःसु च ।
निश्शङ्कं रोधकश्चैव स विप्रोम्लेच्छउच्यते ॥३७९॥
क्रियाहीनश्च मूर्खश्च सर्वधर्मविवर्जितः ।
निर्दयः सर्वभूतेषु विप्रश्चाण्डाल उच्यते ॥३८०॥
वेदैर्विहीनाश्च पठन्ति शास्त्रं शास्त्रेणहीनाश्च पुराणपाठाः।
पुराणहीनाः कृषिणो भवन्ति भ्रष्टास्ततो भागवताभवन्ति। ३८१
ज्योतिर्विदोह्यथर्वाणः कीराःपौराणपाठकाः ।
श्राद्धयज्ञे महादाने वरणीया न कदाचन ॥ ३८२ ॥
श्राद्धं च पितरो घोरं दानं चैव तु निष्फलम् ।
यज्ञे च फलहानिस्स्यात्तस्मात्तान्परिवर्जयेत् ॥ ३८३ ॥
आविकश्चित्रकारश्च वैद्यो नक्षत्रपाठकः ।
चतुर्विप्रा न पूज्यन्ते बृहस्पतिसमायदि ॥ ३८४ ॥
मागधो माथुरश्चैव कापटः कीटकानलौ ।
पञ्च विप्रा न पूज्यन्ते बृहस्पतिसमांयदि ॥ ३८५ ॥

३७० देव, मुनि, द्विज, राजा, वैश्य, शूद्र, निषाद, पशु, म्लेच्छ, चाण्डाल, ये दश प्रकार के ब्राह्मण कहे हैं (जिन को आगे विस्तार से कहते हैं)

३७१ सन्ध्या, स्नान, जप, होम, देवता और अतिथि का नित्यपूजन, बलि वैश्वदेव जो करै, उसे देव ब्राह्मण कहते हैं ॥

३७२ शाक, पत्ते, फल, मूल, इन को भक्षण करै और वन के बसनेमें और प्रति दिन श्राद्ध करने में जो तत्पर हो उस को मुनि ब्राह्मण कहते हैं ॥

३७३ जो वेदान्त को नित्य पढ़ै और सब के सङ्ग को त्यागे, सांख्य और योग शास्त्र को जो विचारे उस को द्विज ब्राह्मण कहते हैं ॥

३७४ जिसने सब के सामने संग्राम में धनुषधारी अस्त्रों से हते हों और जिसने आरम्भों को जीता हो उसे क्षत्रिय ब्राह्मण कहते हैं ॥

३७५ जो खेती के काम में मग्न हो, और गौओं के पालन में तल्लीन हो, जो लेन देन करता हो उस को वैश्य ब्राह्मण कहते हैं ॥

३७६ लाख, लवण, कुसुम्भ, दूध, घी, शराब, मांस, इन को जो बेचता है उस को शूद्र ब्राह्मण कहते हैं ॥

३७७ चोर और तस्कर (प्रबल चोर, डाकू) चुगलखोर, दंशक (विघ्नकारी) मत्स्य के मांस का लोभी, ऐसे को निषाद ब्राह्मण कहते हैं ॥

३७८ जो ब्राह्मण (वेद) के तत्व को न जाने और यज्ञोपवीत का जिसे अभिमान है उसी पाप से उस को शूद्र ब्राह्मण कहते हैं ॥

३७९ बावड़ी, कूप, ताल, बाग़, छोटा तालाब, इन को जो निश्शङ्क होकर रोके उस को म्लेच्छ ब्राह्मण कहते हैं ॥

३८० जो क्रिया से हीन हो, मूर्ख हो, सर्व धर्मों से रहित हो, संपूर्ण भूतों में दया न रखता हो, ऐसे को चाण्डाल ब्राह्मण कहते हैं (यह दश प्रकार के ब्राह्मण हुवे)

३८१ वेद जिन्हें नहीं आता वे शास्त्र को पढ़ते हैं। और शास्त्र जिन्हें नहीं आता वे पुराणों को पढ़ते हैं। पुराण जिन्हें नहीं आता वे खेती करते हैं

३८२ ज्योतिषी अथर्वण वेद के ज्ञाता कीर (जहां तहां कण्ठ से जो तोते की तरह उपदेश करें) पुराण के पढ़ने वाले, इतने ब्राह्मणों को श्राद्ध यज्ञ और महादान में स्थान न दे ॥

३८३ श्राद्ध में पूर्वोक्त ब्राह्मण के जिमाने से पितर घोर नरक में जाते हैं और दान निष्फल होता है और यज्ञफल की हानि होती है इसलिये पूर्वोक्त ब्राह्मणों को नहीं बुलावे ॥

३८४ भेड़ों का पालने वाला, तसवीर खींचने वाला, वैद्य और नक्षत्र पाठक

(पडूकवे, इकौत) जो यह चार प्रकार के ब्राह्मण बृहस्पति के समान भी हों (विद्या में) तौ भी पूजने के योग्य नहीं होते ।।

मगध देश का वासी 'माथुर' कर्पट देश का वासी' कीट और कानदेशके रहने वाले, ये पांच प्रकार के ब्राह्मण चाहे बृहस्पति के तुल्य हों तौभी अपूजनीय हैं, ये अत्रिस्मृति के प्रमाण हैं।। हारीत स्मृति प्रथम अध्यायः—

स्मृतिहीनाय विप्राय श्रुति हीने तथैव च ।
दानं भोजनमन्यच्च दत्तं कुलविनाशनम् ।। २४ ।।

अर्थ—जो ब्राह्मण स्मृति यानी धर्मशास्त्र और श्रुति यानी वेद नहीं पढ़ा है ऐसे ब्राह्मण को दान देना भोजन कराना और भी कुछ देना कुल का नाश करने वाला है ।।

पराशर संहिता ११ अध्याय

गृहस्थधर्मो यो विप्रो ददातिपरिवर्जितः ।
ऋषिभिर्धर्मतत्वज्ञैरपचः परिकीर्त्तितः ।।

अर्थ—जो ब्राह्मण गृहस्थ धर्म होकर दानादि सत्कार्यरहित है धर्म तत्व के जानने वाले ऋषियों ने उसे अपच कहा है (अपच का अन्न तक खाने का निषेध है) ।।

वसिष्ठस्मृति ६ अध्याय

असूयकः पिशुनश्चैव कृतघ्नो दीर्घरोषकः ।
चत्वारः कर्मचाण्डाला जन्मतश्चापि पञ्चमः ।।२३।।
दीर्घवैरमसूयां च असत्यं ब्रह्मदूषणम् ।
पैशुन्यं निर्दयत्वं च जानीयाच्छूद्रलक्षणम् ।।२४।।
योगस्तपोदमोदानं सत्यं शौचं दया श्रुतम् ।
विद्या विज्ञानमास्तिक्यमेतद्ब्राह्मणलक्षणम् ।।२१।।
आचारहीनं न पुनन्ति वेदा यद्यप्यधीताःसहषड्भिरङ्गैः ।
छन्दांस्येनं मृत्युकाले त्यजन्ति नीडं शकुन्ता इव तापतप्ताः।३।

दक्षस्मृति अध्याय २:—

संध्यांनोपासते यस्तु ब्राह्मणो हि विशेषतः ।
स जीवन्नेव शूद्रःस्यान्मृतः श्वा चैव जायते ॥२१॥
सन्ध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्वकर्मसु ।
यदन्यत्कुरुते कर्म न तस्य फलभाग् भवेत् ॥२२॥

अर्थ—वसिष्ठस्मृति

द्वेष करने वाले, चुगल खोर, उपकारक के भूल जाने वाले (अर्थात् निमक हराम) दीर्घ काल रोष रखने वाले, ये चार कर्म्म से चाण्डाल होते हैं, और पांचवां जो जन्म से चाण्डल हो ॥ २३ ॥ दीर्घ समय तक वैर रखना द्वेष करना, असत्य, ब्रह्म (वेद) में दोष लगाना, चुगली खाना, निर्दय होना, यह सब शूद्र के लक्षण जानना ।। २४ ।। (यानी जिस में यह लक्षण हैं वही शूद्र है) योग, तप, इन्द्रियदमन, दान, सत्य, शौच, दया, बहुश्रवण, विद्या, विज्ञान, आस्तिक्य, यह सब ब्राह्मण के लक्षण हैं ।। २१ ।।

ऐसा न होकर जो अपने समान गुण और धर्म वाले शूद्रादि की घृणा करे तो उस का अभिमान और मद धर्म से और भी भ्रष्ट करताहै जैसा यह है:—

ब्रह्मतत्वं न जानाति ब्रह्मसूत्रेण गर्वितः ।
तेनैव स च पापेन विप्रः पशुरुदाहृतः ॥

ब्रह्म का तत्व जो ब्राह्मण नहीं जानता केवल ब्रह्मसूत्र से गर्वित है, उसी पाप से वह पशु कहलाता है ॥

शास्त्र का मत यह है कि जन्म से ब्राह्मण होकर भी जो नीच गुणों को अवलम्बन करते हैं वे नीच जातियों के तुल्य होते हैं । इस का उदाहरण पीछे लिखदिया है । आचारहीन जो ब्राह्मण है यदि छहों अङ्गों सहित वेद पढ़ा हुवा हो तौभी उस को पवित्र नहीं कर सकता । मरते समय पर वेद उस को इस तरह पर छोड़ देता है जैसे जलते हुवे घोंसले को पक्षी छोड़ देते हैं ।। ३ ।। अर्थ—दक्षस्मृतिः—

जो संध्या नहीं करता और विशेष करके ब्राह्मण वह जीवता हुआ ही शूद्र है और मर कर कुत्ता होगा ।। २१ ।।

जो संध्या नही करता यह सर्वदा अपवित्र रहता है और सब कामों में अनधिकारी है और यदि कुछ कर्म करे तो उस को उस का फल नहीं होता ॥ २२ ॥ अध्याय २ ॥

पाराशरस्मृति, अष्टमोऽध्यायः

अज्ञात्वा धर्म्मशास्त्राणि प्रायश्चित्तं ददाति यः ॥
प्रायश्चित्ती भवेत्पूतः किल्विषं पर्षदि व्रजेत् ॥१४॥
चत्वारो वा त्रयोवापि यं ब्रूयुर्वेदपारगाः ।
सधर्म्म इति विज्ञेयो नेतरैस्तु सहस्रशः ॥१५॥
प्रमाणमार्ग मार्गन्तोये धर्मं प्रवन्दति वै ।
तेषामुद्विजते पापं सद्भूतगुणवादिनाम् ॥१६॥
यथाश्मनि स्थितं तोयं मारुतार्केण शुद्ध्यति ।
एवं परिषदादेशान्नाशयेत्तत्रदुष्कृतम् ॥१७॥
नैव गच्छति कर्तारं नैव गच्छति पर्षदम् ।
मारुतार्कादिसंयोगात्पापं नश्यति तोयवत् ॥ १८ ॥
चत्वारो वा त्रयो वापि वेदवन्तोऽग्निहोत्रिणः ।
ब्राह्मणानां समर्थाये परिषत्साभिधीयते ॥ १९ ॥
अनाहिताग्नयोयेऽन्ये वेदवेदाङ्गपारगाः ।
पञ्च त्रयो वा धर्मज्ञाः परिषत्सा प्रकीर्तिता ॥२०॥
मुनीनामात्मविद्यानां द्विजानां यज्ञयाजिनाम् ।
वेदव्रतेषुस्नातानामेकोऽपि परिषद्भवेत् ॥२१॥
पञ्च पूर्वं मयाप्रोक्तास्तेषां चासम्भवे त्रयः ।
स्ववृत्तिपरितुष्टा ये परिषत्साप्रकीर्तिता ॥२२॥
अतऊर्ध्वं तु ये विप्राः केवलं नामधारकाः ।
परिषत्त्वं न तेष्वस्ति सहस्रगुणितेष्वपि ॥ २३ ॥

यथा काष्ठमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः ।
ब्राह्मणस्त्वनधीयानस्त्रयस्ते नामधारकाः ॥२४॥
ग्रामस्थानं यथ शून्यं यथा कूपस्तुनिर्जलः ।
यथा हुतमनग्नौ च अमन्त्रो ब्राह्मणस्तथा ॥ २५ ॥
यथा षढोऽफलः स्त्रीषु यथागौरुषराऽफला ।
यथा चाज्ञेऽफलं दानं तथा विप्रोऽनृचोऽफलः ॥२६॥
चित्रकर्म यथाने कैरङ्गैरुन्मीलयते शनैः ।
ब्राह्मण्यपि हि तद्वद्धि संस्कारैर्मन्त्रपूर्वकैः ॥२७॥
प्रायश्चित्तं प्रयच्छन्ति ये द्विजा नामधारकाः ।
ते द्विजाःपापकर्माणः समेता नरकं ययुः ॥ २८ ॥
गायत्रीरहितो विप्रः शूद्रादप्यशुचिर्भवेत् ।
गायत्री ब्रह्मतत्वज्ञाः संपूज्यन्ते जनैर्द्विजाः ॥२९॥
प्रायश्चित्तं सदा दद्याद्देवतायतनाग्रतः ।
आत्मकृच्छ्रं ततः कृत्वा जपेद्वै वेदमातरम् ॥ ३६ ॥

अर्थ

जो धर्मशास्त्र को न जान कर प्रायश्चित्त देता है वह पापी तो पवित्र हो जाता है और पाप पर्षद् में जाता है परन्तु पापी ने पर्षद् को धर्म्मज्ञ जानके पूछा हो ।। १४ ॥

चार व तीन वेद के पार जानने वाले जो कहैं वही धर्म्म जानना और इतर हजार भी जिसे कहैं वह नहीं ।। १५ ।।

प्रमाण के मार्ग को ढूंढते हुवे जो सत्य के कहने वाले धर्म्म को कहते हैं उन से पाप कांपता है ।।१६।।

जैसे पत्थर पर पड़ा जल पवन और सूर्य से शुद्ध होता है ऐसे परिषद् की आज्ञा से पाप भी नष्ट हो जाता है ।।१७।। वह पाप न करने वाले पर जाते हैं और न सभा पर किन्तु पवन और सूर्य्य के संयोग से जल के समान नष्ट हो जाते हैं ।। १८ ।।

वेद के ज्ञाता अग्निहोत्री चार या तीन जो ब्राह्मणों में समर्थ हों उसे परिषद् कहते हैं ।। १९ ।।

जो अग्निहोत्री न हों और वेद वेदाङ्ग के पार को जनाने वाले और धर्म के ज्ञाता पांच या तीन हों उसे परिषद् कहते हैं ।।२०।।

मुनि और आत्मविद्या (वेदान्त) के ज्ञाता और यज्ञ कराने वाले और वेद व्रतों के करने वाले ब्राह्मणों में यदि एक भी होय तो उसे भी परिषद् कहते हैं ।। २१ ।।

जो पहिले मैंने पांच कहे हैं यदि वे न मिलैं तो अपनी वृत्ति (जीविका) करने वाले हों, सन्तोषी हों, उसे भी परिषत् कहते हैं ।। २२ ।।

इस से आगे जो ब्राह्मण केवल नाम के धारण करने वाले हैं वह हज़ार गुणे भी हों उन को परिषद् पना नहीं होता ।। २३ ।।

काठ का हाथी, और चाम का मृग, और विना पढ़ा ब्राह्मण, ये तीनों नाम के ही धारण करने वाले हैं ।। २४ ।।

जैसे शूद्रों का ग्राम—और जैसा जल के विना कूप, और जैसा विना अग्नि आहुति है, ऐसा ही विना मन्त्र (वेद) ब्राह्मण है ।। २५ ।।

जैसे नपुंसक स्त्रियों में वृथा है, और जैसे वन्ध्या गौ वृथा है, जैसे मूर्ख को दान देना वृथा है, ऐसे ही वेदहीन ब्राह्मण वृथा है ।।२६।।

जैसे चित्रकर्म अनेक रंगों से शनैः २ होता है इसी प्रकार मन्त्रों के द्वारा अनेक संस्कारों से ब्राह्मण (ब्राह्मणपना) होता है ।।२७।।

जो नाम धारने वाले ब्राह्मण प्रायश्चित्त देते हैं वे सब पाप के कर्त्ता इकट्ठे होकर नरक में जाते हैं ।। २८ ।।

गायत्री से हीन ब्राह्मण शूद्र से भी अशुद्ध होता है । और गायत्री और वेद के तत्व के ज्ञाता ब्राह्मणों को मनुष्य पूजते हैं ।।२९।। इतर पूजने योग्य नहीं है सदैव देवता के मन्दिर के आगे प्रायश्चित दे फिर अपना कृच्छ्र प्रायश्चित्त कर के गायत्री जपे ।। ३६ ।।

अग्निकार्य्यात्परिभ्रष्टाः सन्ध्योपासनवर्जिताः ।
वेदं चैवानधीयानाः सर्व्वे ते वृषलाः स्मृताः ॥
दक्षिणार्थन्तु तु यो विप्रः शूद्रस्य जुहुयाद्धविः ।
ब्राह्मणस्तु भवेच्छूद्रः शूद्रस्तु ब्राह्मणो भवेत् ॥

अर्थ—जो अग्निहोत्र नहीं करते। सन्ध्योपासनरहित हैं। वेद को नहीं पढ़ते। वे सब शूद्र कहे गये हैं। जो अग्नि कार्य्य से परिभ्रष्ट न हुवे हों ऐसे ब्राह्मण तो अब देखने में नहीं आते; अतएव शास्त्र के अनुसार तो इन दिनों के प्रायः ब्राह्मणों और शूद्रों में कुछ भेद नहीं ॥

व्याससमृति के प्रमाण

द्वेजन्मनीद्विजातीनां मातुः स्यात्प्रथमंतयोः ।
द्वितीयं छंदसां मातुर्ग्रहणाद्विधिवद्गुरोः ॥ २१ ॥
एवं द्विजातिमापन्नो विमुक्तो वान्यदोषतः ।
श्रुतिस्मृतिपुराणानां भवेदध्ययनक्षमः ॥ २२ ॥

अध्याय प्रथम ॥

किञ्चिद्वेदमयं पात्रं किञ्चित् पात्रं तपोमयम् ।
पात्राणामुत्तमं पात्रं शूद्रान्नं यस्य नोदरे ॥ ३२ ॥
यस्य चैव गृहे मूर्खो दूरे चापि गुणान्वितः ।
गुणान्विताय दातव्यं नास्ति मूर्खे व्यतिक्रमः ॥ ३३ ॥
ब्राह्मणातिक्रमो नास्ति विप्रे वेदविवर्जिते ।
ज्वलन्तमग्निमुत्सृज्य नहिं भस्मनि हूयते ॥ ३५ ॥
सन्निकृष्टमधीयानं ब्राह्मणं यो व्यतिक्रमेत् ।
भोजने चैव दाने च हन्यात्रिपुरुषंकुलम् ॥३६॥
यथा काष्ठमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः ।
यश्च विप्रोऽनधीयानस्त्रयस्ते नामधारकाः ॥३७॥
ग्राम्यस्थानं यथा शून्यं यथा कूपश्च निर्जलः ।
यश्च विप्रोऽनधीयानस्त्रयस्ते नामधारकाः ॥३८॥
समन्तु ब्राह्मणे दानं द्विगुणं ब्राह्मणब्रुवे ।
सहस्त्रगुणमाचार्य्ये ह्यनन्तं वेदपारगे ॥ ४० ॥

ब्रह्मबीजसमुत्पन्नो मन्त्रसंस्कारवर्जितः ।
जातिमात्रोपजीवी च स भवेद् ब्राह्मणः समः ॥४१॥
गर्भाधानादिभिर्मन्त्रैर्वेदोपनयनेन च ।
नाध्यापयति नाधीते स भवेद्ब्राह्मणब्रुवः॥ ४२॥
अग्निहोत्री तपस्वी च वेदमध्यापयेच्च यः ।
सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते ॥ ४३ ॥
मीमांसते च यो वेदान् षड्भिरङ्गैः सविस्तरैः ।
इतिहासपुराणानि स भवेद्वेदपारगः ॥४५॥
सुक्षेत्रे वापयेद्बीजं सुपात्रे दापयेद्धनम् ।
सुक्षेत्रे च सुपात्रे च क्षिप्तं नैव हि दुष्यति ॥४९॥
विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गृहमागते ।
क्रीडन्त्योषधयः सर्वा यास्यामः परमाङ्गतिम् ॥५०॥
नष्टशौचे व्रतभ्रष्टे विप्रे वेदविवर्जिते ।
दीयमानं रुदत्यन्नं भयाद्वै दुष्कृतं कृतम् ॥५१॥
वेदपूर्णमुखं विप्रं सुभुक्तमपि भोजयेत् ।
न च मूर्खं निराहारं षड्रात्रमुपवासिनम् ॥५२॥
यद्भुङ्क्ते वेदविद्विप्रः स्वकर्मनिरतः शुचिः ।
दातुः फलमसंख्यातं प्रतिजन्म तदक्षयम् ॥५५॥
वेदलाङ्गलकृष्टेषु द्विजश्रेष्ठेषु सत्सु च ।
यत्पुरा पातितं बीजं तस्यैताः सस्यसंपदः ॥५७॥
शतेषु जायते शूरः सहस्रेषु च पण्डितः ।
वक्ता शतसहस्रेषु दाता भवति वा न वा ॥५८॥
न रणे विजयाच्छूरोऽध्ययनान्न च पण्डितः ।

न वक्ता वाक्पटुत्वेन न दाता चार्थदानतः ॥५९॥
इन्द्रियाणां जये शूरो धर्मं चरति पण्डितः ।
हितप्रायोक्तिभिर्वक्ता दाता सम्मानदानतः ॥६०॥
ऊषरे वापितं बीजं भिन्नभाण्डेषु गोदुहम् ।
हुतं भस्मनि हव्यं च मूर्खे दानमशाश्वतम् ॥ ६२ ॥
मृतसूतकपुष्टाङ्ग द्विजे शूद्रान्नभाजने ।
अहमेवं न जानामि कां योनिं स गमिष्यति ॥ ६३ ॥
शूद्रान्नेनोदरस्थेन यदि कश्चिन्म्रियेत यः ।
सभवत्शूकरोनूनं तस्य वा जायते कुले ॥ ६४ ॥
गृध्रोद्वादश जन्मानि सप्त जन्मानि शूकरः ।
श्वा च वै सप्त जन्मानि इत्येवं मनुरब्रवीत् ॥ ६५ ॥
अमृतं ब्राह्मणान्नेन दारिद्र्यं क्षत्रियस्य च ।
वैश्यान्नेन तु शूद्रान्नम् शूद्रान्नान्नरकं व्रजेत् ॥ ६६ ॥
यश्च भुङ्क्तेऽत्र शूद्रान्नं मासमेकं निरन्तरम् ।
इह जन्मनि शूद्रत्वं मृतः श्वा चैव जायते ॥६७॥ अ०४॥

अर्थ—द्विजातियों के जन्म दो होते हैं उन दोनों में पहिला माता से और दूसरा गुरु से वेदों की माता (गायत्री) के विधिपूर्वक ग्रहण करने से ॥२१॥

ऐसे द्विजाति को प्राप्त हुवा और अन्य दोषों से निवृत्त होकर श्रुति स्मृति पुराण इन के पढ़ने के योग्य होता है ॥ २२ ॥

कोई तो वेदपाठी पात्र होता है, कोई तपस्वी होता है। और पात्रों में उत्तम पात्र वह है कि जिस के पेट में शूद्र का अन्न न हो॥३२॥ हे सज्जन पुरुषो आप विचार लो, ऐसे कितने हैं ॥

जिस के घर में तो मूर्ख हो और गुणी दूर हो तौ भी गुणी को दान देवे, मूर्ख को नहीं ॥३३॥

वेद से ही ब्राह्मण का अवलम्बन नहीं होता क्योंकि जलती हुई अग्नि

को छोड़कर भस्म में होम नहीं किया जाता है ॥३५॥

भोजन और दान में समीप के पढ़े हुवे ब्राह्मण का जो अवलंघन करता है वह तीन पीढ़ी तक अपने कुल को नष्ट करता है ॥३६॥

जैसा काठ का हाथी और जैसा चाम का मृग और वैसा ही विना पढ़ा ब्राह्मण ये तीन नाम के ही धारण करने वाले हैं। अर्थात् निरर्थक हैं ॥३७॥

जैसा शून्य ग्राम का स्थान और जैसा जलहीन कूप और वैसा ही विना पढ़ा ब्राह्मण ये तीनों नाम के ही धारक है (यानी पूजन के योग्य नहीं) ३८

सम ब्राह्मण को जो दिया जाय वह सम (उतना ही) है और ब्राह्मणब्रुव (सामान्य ब्राह्मण) को जो दिया जावे वह दूना और आचार्य्य को हज़ार गुना और वेद के पार जानने वाले को दिया अनन्त होता है ॥ ४० ॥

जो ब्राह्मण के बीज से पैदा हो और मन्त्रों से संस्काररहित हो और ब्राह्मण जाति से ही जीवे वह ब्राह्मण सम होता है ॥ ४१ ॥

जिस के गर्भ से लेकर उपनयन तक सब संस्कार मन्त्र सहित हुवे हों और जो न तो पढ़ाता हो और न पढ़ा हो वह ब्राह्मणब्रुव कहलाता है ॥ ४२ ॥

जो हवन करता हो तपस्वी हो और कल्प रहस्य के साथ वेद पढ़ाता हो उसे आचार्य्य कहते हैं ॥ ४३ ॥

जो ब्राह्मण वेद के अर्थ की मीमांसा छओं अङ्ग के भाष्य से पूर्वापर विचार कर करता है और इतिहास पुराणों की भी मीमांसा कर सकता है वह वेदपारग ब्राह्मण कहलाता है ॥ ४४ ॥

अच्छे खेत में तो बीज बोवे और सुपात्र को दान देवे, इस कारण कि अच्छे जुते खेत में और पात्र के दान देने में सफल होता है नष्ट नहीं होता ॥४९॥

वेदादि जो विद्या हैं उन का जानने वाला और शान्ति आदि गुणों से सम्पन्न ब्राह्मण यदि घर में आवे उस घर की जोस लेकर जो अन्नादि ओषधी हैं वह सब अत्यन्त प्रसन्न होती हैं और यह कहती हैं कि अहोभाग्य इस ब्राह्मण के सम्बन्ध से हमारी भी गति हो जावेगी ॥५०॥

जो ब्राह्मण बाहर भीतर से शुद्ध नहीं और ब्रह्मचर्य्यादि व्रत जिस के भ्रष्ट होगये और वेद को नहीं जानता है उस को जो अन्न दिया जाता है वह रोता है कि मैं ने क्या पाप किये थे जो ऐसे भ्रष्ट ब्राह्मण के पेट में मैं जाऊंगा ॥५१॥

वेद के जानने वाले पेट भरे हुवे ब्राह्मण को भी भोजन करा देना, और यदि मूर्ख ब्राह्मण जो ६ दिन का भूखा भी होवे उसे भी भोजन नहीं दे ॥५२॥

जिस के घर में वेद के जानने वाले ब्राह्मण भोजन करते हैं और वह ब्राह्मण अपने कर्म में तत्पर हैं उस दाता को जन्म जन्म के प्रति अक्षय फल होगा ॥५५॥

हस्ती घोड़े इत्यादि जो सम्पद् हैं वह उसी की हैं (उसे मिलती हैं) जिस ने पूर्वजन्म में वेद के जानने वाले ब्राह्मण को दान दिया है ॥५७॥

सौ में तो एक शूरवीर पैदा होता है और हजार में एक पण्डित और लक्ष में एक वक्ता और दाता इतनों में भी हो या न हो यह विकल्प ही है ॥५८॥

जो लड़ाई में विजय पावे वह शूर नहीं है और जो वेदादि सब शास्त्रों को पढ़ लेवे वह पण्डित नहीं। बहुत चतुराई की बात कहने वाला वक्ता नहीं होता, और न बहुत धन का दान देने वाला, दाता होता है ॥ ५९ ॥

किन्तु जिस ने अपनी दशों इन्द्रिय और ग्यारहवें मन को वश में कर लिया वह शूरवीर है। और जो धर्म में चलता है (चाहे मूर्ख भी हो) वही पण्डित है। और जो हित की बात कहे वह वक्ता है। और जो सम्मानपूर्वक पात्र को दान देवे वह दाता कहलाता है ॥ ६० ॥

कल्लर में बीज बोना, और फूटे पात्र में दूध दुहना, राख में हवन करना और मूर्ख को दान देना, यह सब वृथा है। यानी इन का फल कुछ नहीं होता किन्तु धन और बीजादि सब दिया हुआ नष्ट होजाता है ॥६२॥

जो ब्राह्मण जन्म और मृतक के सूतक में खाता है या शूद्र का अन्न खाता है व्यास जी कहते हैं कि मैं नहीं जानता उस की क्या क्या गति होगी। यहां मृतक और जन्म के सूतक से तेहरी या जमूठन में खाना निषिद्ध नहीं॥ यदि वह ब्राह्मण के यहां दसदिन पश्चात् और क्षत्रिय के बारह १२ दिन वैश्य के १५ दिन और शूद्र के एक महीने पश्चात् होवे। और जो इन दिनों के भीतर हो तब खाना निषिद्ध है इस का यह आशय समझना चाहिये ॥६३॥

यदि मरते समय में शूद्र का अन्न ब्राह्मणके पेट में होवे तब वह मरकर निश्चय करके शूकर होगा या जिस शूद्र का अन्न था उस के कुल में होगा ॥६४॥

और मनु जी तो यह कहते हैं कि वह ब्राह्मण जिस के पेट में मरते समय शूद्र का अन्न रह गया हो मर कर बारह १२ जन्म तक गीध और ७ जन्म तक शूकर और सात ७ जन्म तक कुत्ता होगा ॥ ६५ ॥

अब विचार लो ऐसे कितने ब्राह्मण हैं जिनके पेट में मरते समय शूद्र का अन्न न रहता हो। और आज कल के तो पण्डित तक भी शूद्र के अन्न

से ही जीते हैं ॥ जो ब्राह्मण का अन्न खावे वह अमृत के तुल्य है और जो क्षत्रिय का खावे तो दरिद्र हो जावे और वैश्य का अन्न शूद्र के अन्न के तुल्य है और शूद्र का अन्न खाने से नरक होता है ॥६६॥

यहां नित्य खाने से आशय है, पर्व आदि में नहीं। या दानादि लेने में डर नहीं है। और जो ब्राह्मण शूद्र का अन्न निरन्तर एक महीने तक खाले तब वह इसी जन्म में शूद्र है और मर कर कुत्ता होगा ॥६७॥

इस से जो ब्राह्मण जन्म पर्यन्त शूद्र का अन्न खाते हैं न जाने उन की क्या गति होगी और जो पण्डित शूद्र के नौकर हैं या जिनके शूद्र शिष्य हैं न जाने उन की क्या गति होगी। और शूद्र जो संस्कारी पैदा होते हैं व्यास जी के कथनानुसार वह पहिले जन्म के ब्राह्मण हैं जिन्होंने शूद्र का अन्न खाया था। यदि कोई उत्तम कुल में उत्पन्न हुआ भी निकृष्ट वर्ण के गुण कर्मों वाला जन्म से ही हो तो उस के संस्कार उत्तम वर्ण के से न होने चाहियें। और हों तो उक्त सिद्धान्तानुसार शास्त्र की मर्यादा से विरोध आवेगा ॥

उत्तर—इस का उत्तर यह है कि जन्म होते ही जब दस दिन में नामकरण संस्कार होता है तब ही से ब्राह्मण के लड़के का नाम शर्मान्त और क्षत्रिय का वर्मान्त इत्यादि रखने की मनु जीने आज्ञा दी है। इस कारण कि जन्म होते ही परीक्षा नहीं होसकती कि इस में कैसे गुण कर्म होंगे और अच्छे गुण कर्मों की आशा पर सब कामों का प्रारम्भ अच्छी दशा के साथ किया जाता है और करना भी चाहिये। यदि कोई कहे कि ब्राह्मण के बालक का भविष्यत् में कर्मानुकूल ब्राह्मण होना निश्चित नहीं है तो हम उत्तर देंगे कि ब्राह्मण के सन्तान का भविष्यत् में शूद्र होना कहां निश्चित है? परन्तु ब्राह्मण के सन्तान का ब्राह्मण ही होना अधिक सम्भव है जैसे कि उत्तम बीज बोने से उत्तम अन्न होना अधिक सम्भव है और उस का शूद्र होना कम सम्भव है ॥

परन्तु जो नाम मात्र के ब्राह्मण रहगये, जिन में गुण कर्म रूप ब्राह्मणपन का पता नहीं, उन की सन्तान भी वास्तव में शूद्र है। अर्थात् पूजने योग्य नहीं है। जिन कुलों में ब्राह्मणपन का कोई काम सहस्रों वर्ष से नहीं रहा वे अब तक भी ब्राह्मण समान माने जाते हैं। यह लौकिक परिपाटी शास्त्र से विरुद्ध है, इस का कुछ उत्तर नहीं ॥

जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विजउच्यते ।
वेदाभ्यासी भवेद्विप्रो ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः ॥

अर्थः—जन्म से मनुष्य शूद्रतुल्य होता है और संस्कार ठीक २ होने से द्विज कहाता है तथा वेद के अभ्यास से उस की विप्र संज्ञा पड़ती और ब्रह्म को जानने वाला ब्राह्मण कहाता है ॥ यह श्लोक कहां का है इस को हम निश्चय के साथ नहीं कह सकते, हमें केवल आशय मात्र देखना है और यह शास्त्रविरुद्ध भी नहीं है । पूर्वकाल के महात्मा विद्वानों का भी इस विषय पर कुछ सम्मतिभेद दीखता है । कोई विद्वान् जाति (जिस का अष्ट प्रकार के मैथुन में एक भी नहीं बिगड़ा हो) वा स्वभाव अथवा प्रारब्ध को प्रबल मानते वा ठहराते हैं और कोई संस्कार वा क्रियमाण को प्रबल ठहराते हैं । शोचना यह है कि मान्यवर धर्म्मशास्त्रकार मनु जी की इस विषय में क्या सम्मति है ? मनु में भी अनेक वचन संस्कार को प्रबल ठहराने के लिये मिलते हैं और अनेक ऐसे भी हैं जिन से जाति की प्रबलता भी निकलती हैं, मनुस्मृति अध्याय २—

नाभिव्याहारयेद्ब्रह्म स्वधानिनयनादृते ।
शूद्रेण हि समस्तावद्यावद्वेदे न जायते ॥ १७२ ॥
अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः ।
सावित्रीपतिताव्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः ॥ ३९ ॥
कृतोपनयनस्यास्य व्रतादेशनमिष्यते ।
ब्रह्मणोग्रहणं चैव क्रमेण विधिपूर्वकम् ॥

यज्ञोपवीतसंस्कार होने से पहिले ब्राह्मणादि के बालक को वेद न पढ़ावे और श्राद्धादिकों में भी स्वधा के सिवाय वेदमन्त्र उच्चारण न करे जब तक संस्कार न हो तब तक शूद्र के तुल्य है ॥ १७२ ॥

इन के ऊपर तीनों पतित होते हैं । अपने काल में उपनयन से रहित होने से इन की व्रात्य संज्ञा होती है और किसी धर्म्म कार्य्य के योग्य नहीं रहते हैं ॥ ३९ ॥

और यज्ञोपवीत हो जाने पर वैदिक कर्म का उपदेश होना चाहिये और तभी क्रम से विधिपूर्वक वेद पढ़ाया जावे ॥

बीजस्य चैव योन्याश्च बीजमुत्कृष्टमुच्यते ।
सर्वभूतप्रसूतिर्हि बीजलक्षणलक्षिता ॥ ३५ ॥
यादृशन्तूप्यते बीजं क्षेत्रे कालोपपादिते ।
तादृग्रोहति तत्तस्मिन् बीजं स्वैर्व्यञ्जितं गुणैः ॥ ३६ ॥
इयं भूमिर्हि भूतानां शाश्वती योनिरुच्यते ।
न च योनिगुणान् कांश्चिद्बीजं पुष्यति पुष्टिषु ॥ ३७ ॥
भूमावप्येककेदारे कालोप्तानि कृषीबलैः ।
नानारूपाणि जायन्ते बीजानीह स्वभावतः ॥ ३८ ॥
व्रीहयः शालयो मुद्गास्तिला माषास्तथा यवाः ।
यथाबीजं प्ररोहन्ति लशुनानीक्षवस्तथा ॥ ३९ ॥
अन्यदुप्तं जातमन्यदित्येतन्नोपपद्यते ।
उप्यते यद्धि यद्बीजं तत्तदेव प्ररोहति ॥ ४० ॥

अर्थ

बीज और खेत की उत्तमता के विचार में बीज प्रबल वा प्रधान कहा गया है क्योंकि संपूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति बीजों ही के लक्षण से जानी जाती है ।।३५।।

जैसा बीज ऋतु काल में बोने के समय ठीक किये वा खातादि डाल कर जोते हुये खेत में बोया जाता है वह अपने तिरोभूत (दबे हुवे) गुणों से (जो गुण बीज में सूक्ष्म रूप से पहिले ही विद्यमान हैं) प्रसिद्ध हुआ वैसा ही जमता है जैसा बीज बोया गया था ॥३६।।

प्राणिमात्र की उत्पत्ति का यह स्त्री रूप सनातन खेत कहा वा माना जाता है । जब यह प्रश्न हो कि उत्पत्ति होने में खेत के गुणों को बीज वा बीज के गुणों को खेत पुष्ट करता है? क्योंकि विद्यमान बीज वा खेत दोनों में से किसी के गुणों की पुष्टि वा वृद्धि होना ही वास्तव में उत्पत्ति कहाती है । इस के लिये उत्तर दिया गया है कि पुष्टि वा वृद्धि के समय खेत के किन्हीं गुणों को बीज पुष्ट नहीं करता अर्थात् सन्तानों की उत्पत्ति में पुरुष के बीजस्थ गुणों की ही वृद्धि वा पुष्टि होती है ।। ३७ ॥

एक किस्म के या एक ही गुण वाली पृथ्वी के खेत में कृषी बल से समय में बोए हुए बीज अर्थात् जब धान्यादि अपने स्वभाव से नाना रूप उत्पन्न होते हैं यानी एक गुण वाली पृथ्वी होने से एक रूप नहीं होता किन्तु बीज ही का स्वरूप होना है ॥३८॥

कई व्रीहि वा शालि नामक, धान, मूंग, तिल, उड़द, लहसन, ऊख और जौ मिला कर एक ही स्थल में बो देने से भिन्न २ उत्पन्न होते हैं। अर्थात् धान के बीज से धान, तिल के से तिल औरमूंग से मूंग इत्यादि प्रकार अपने २ बीज से भिन्न २ ही ओषधियां जमती हैं। यदि उत्पत्ति में खेत के गुणों की प्रधानता होती तो प्रायः एक गर्भाशय के तुल्य पृथिवी के हाथ दो हाथ स्थल में एक ही सा गुण होने से धानादि में से कोई एक वा दो ही सब बीजों से उत्पन्न होते ॥३९॥

अन्य कुछ बोया जाय अन्य उत्पन्न हो, यह नहीं बनसकता क्योंकि प्रत्यक्ष में दिखाता है कि धान आदि जो बीज जिस खेत में बोया जाताहै वही उत्पन्न होता है ॥४०॥

इस में एक और भारत का भी दृष्टान्त है जब शकुन्तला 'अपने लड़के भारत को जो राजा दुष्यन्त से हुआ था लेकर गई और कहा हे राजन्! देख यह तेरा ही पुत्र है परन्तु राजा ने उस का अपमान करा तब आकाश बाणी हुई-

"माता भस्त्रा पितुःपुत्रो येन जातः सएव सः।
भरस्व पुत्रं दुष्यन्त माऽवमंस्थाः शकुन्तलाम् ॥

अर्थ-माता तो चमड़े की पिटारी के तुल्य है और पिता का पुत्र है यानी जिस से उत्पन्न हुआ है। इस कारण हे राजा! (दुष्यन्त) इसका पोषण कर ॥

नीतिः- न धर्मशास्त्रं पठतीति कारणम्।
न चापिवेदाध्ययनं दुरात्मनः ॥
स्वभावएवात्र तथातिरिच्यते।
यथा प्रकृत्या मधुरं गवां पयः ॥

अर्थ—धर्मशास्त्र, अथवा वेद पढ़ने से जो दुष्ट मनुष्य है वह अच्छा नहीं होता, स्वभाव ही सब में मुख्य रहता है। जैसे गाय यदि नीम के पत्ते भी खावे तथापि उस का दूध मीठा ही होगा क्योंकि उस के दूध में मधुरता स्वभाव से है। इसलिये दुष्ट स्वभाव पढ़ने या लिखने से नहीं बदल सकता है और पढ़ने से छिप भी नहीं सकता, इसलिये स्वभाव से ही ब्राह्मणता यदि वह मूर्ख भी हो तौ विदित हो जाती है ।।

अपरञ्च—सर्वस्य हि परीक्ष्यन्ते स्वभावा नेतरे गुणाः ।
अतीत्य हि गुणान् सर्वान् स्वभावो मूर्द्ध्नि वर्तते ॥

अर्थ—सब की स्वभाव से ही परीक्षा होती है और किसी गुण से नहीं होती क्योंकि स्वभाव सब से बलवान् है यानी प्रधान है और वह सब गुणों को उल्लङ्घन करके सिर पर रहता है ।।

"विद्या तपश्च योनिश्च एतत् ब्राह्मणलक्षणम्" महाभारते

देखो यहां भी केवल जाति में योनि ही कारण नहीं मानी किन्तु विद्या और तप का होना भी अवश्य है। विद्या सब से आदि में इस लिये है कि मूर्ख यथाविधि तप नहीं कर सकता और विना विधि के कार्य (जैसे प्रायः आजकल होते हैं) का धर्मशास्त्र में कुछ फल नहीं लिखा। इसलिये आदि में विद्या शब्द पड़ा है और केवल विद्या पढ़ने से भी पात्र नहीं माना जाता क्योंकि वेदादि विद्या को बहुत से पादरी लोग भी पढ़ते हैं परन्तु तप से शून्य होने से वह उस के फल को प्राप्त नहीं होते। इसलिये तप भी आवश्यक है और संस्कारादि योनि के कारण से होते हैं। इसलिये योनि शब्द अन्त में पड़ा है। यदि यह सब बातें एक ही में पाई जावें तो वह सब में मुख्य ब्राह्मण मानना चाहिये ॥

देखो जाबाला का लड़का जब गौतम के पास यज्ञोपवीत कराने आया तब उसने कहा कि जा अपनी माता से गोत्र पूछ आ, तब लड़के ने माता से आकर गोत्र पूछा, उस ने कहा, मैं तेरा गोत्र नहीं बतासकती क्योंकि मैंने कई पुरुषों से संग करा था न जाने किस का गर्भ रह गया, मैं नहीं जानती लड़के ने ऐसे ही जाकर गुरु से कहदिया, गुरु ने कहा तू ब्राह्मण का लड़का है, क्योंकि मुख्य धर्म ब्राह्मण का सत्य बोलना है और तैने सत्य बोलने में कुछ लज्जा नहीं करी और जा तेरा गोत्र जाबाला ही रहा ।।

इसीतरह पर पहिले जिस का पिता ज्ञात नहीं होता था, गुण से ही परीक्षा होती थी, इस लिये जातिभेद में मुख्य स्वभाव ही कारण है ।।

नीचे लिखे हुवे पुस्तक स्वामियन्त्रालय मेरठ से मिलेंगे

संस्कृत भाषा प्रथम)॥। द्वितीय -)।
तृतीय =)॥ चतुर्थ ।।) चारोंसाथ नकद
।।=) जिल्द ॥≡) चांदी के काम की १)
संस्कृत भाषा प्रथम श्रेणि (रीडर) -)
अज्ञाननिवारण । -)।।
ऋ० भाष्यभूमिकेन्दूपरागेप्रथमोंशः -)॥
" " द्वितीयोंशः -)।।।
शास्त्रार्थकिराणा -)
देवनागरी वर्णमाला की पुस्तक)।
वैदिकदेवपूजा (१ व्याख्यान) (नई) -)
ईश्वर और उस की प्राप्ति (२ व्याख्यान -)
*भास्करप्रकाश ३ समुल्लास ।=)
सन् ९७ के १२ अङ्क वेदप्रकाश के ।।।)
सन् ९८ के १२ अङ्क वेदप्रकाश के ॥।)
दोनों वर्ष के साथ नकद १।)
(नया) श्लोकयुक्त निघण्टु ।) सजिल्द ।≡)
श्वेताश्वतरोपनिषद्भाष्य ।≡)
विदुरनीति भाषाटीका ।=) सजिल्द ।।)
चाणक्यनीतिसार भाषाटीका नई -)।
प्रश्नोत्तररत्नमाला भाषा टीका -)
आर्यचर्पटपञ्जरी (भजविशेषं) धेला
भजनेन्दु (भजनपुस्तक) नया छपा -)
नास्तिकाधिक्कार (लोपकमन्दूक आदि)।।।
आर्यसमाज के नियम सौ के ≡)।
व्याख्यान का विज्ञापन सौ के =)
नमस्ते (इस पर सम्मति ३ व्याख्यान))।
विवाह के मन्त्र २) के १०० प्रति)।।
रामायण का आल्हा प्रथम भाग)।
" द्वितीय भाग)।।
६४ कला १४ विद्या ।)

पद्य कन्या चरित्र)।।
लावनी फूट)।
सत्यार्थप्रकाशसंग्रह ≡)
सन्ध्या अर्थ सहित नई)। व १०० का १।)
पञ्चमहायज्ञमूल १०० का ।।=) दो का)।
३ आरती)। की ३ और ।=) की १००

स्वामी जी कृत पुस्तकें

सत्यार्थप्रकाश नया छपा २) वा २॥)
यजुर्वेदभाष्य सजिल्द २७)
भूमिका विना जिल्द २॥) सजिल्द २।।।-)
उणादिकोष ।।)
संस्कारविधि १।) सजिल्द १।।)
निरुक्त १)
शतपथब्राह्मण १ काण्ड ॥)
वर्णोच्चारणशिक्षा -)
पञ्चमहायज्ञविधि ≡)।।
आर्याभिविनय ।) सजिल्द =)।
आर्यसमाज के नियमोपनियम)।
हवनमन्त्र)।। पारिभाषिक ।)
आर्योद्देश्यरत्नमाला -)

अन्य पुस्तकें

धर्मप्रचार (पं० लेखरामकृत))॥
बालविवाह नाटक -)
वायुमण्डल (वेदमन्त्र व्याख्या))।
गणितारम्भ -)।।
कर्मवर्णन)॥
ब्रह्मकीर्त्तन)।।
शिक्षावली)॥
पुराणपरीक्षा ≡)
कण्ठी अनेक का विवाह -)
पं० लेखरामका संक्षिप्तजीवनचरित्र -)।